[२०२२] २ एस. सी. आर १०४१

सुख दत्त रात्रा एवं अन्य

विरूद्ध

हिमाचल प्रदेश राज्य एवं अन्य

(सिविल अपील क्रमांक २७७३/२०२२)

०६ अप्रैल २०२२

[न्यायमूर्ति एस. रवींद्र भट एवं न्यायमूर्ति पामिदिघंतम श्री नरसिम्हा]

भारत का संविधान, १६५०: अनुच्छेद ३००- क- संपत्ति से वंचित होने के विरूद्ध अधिकार- प्रत्यर्थी राज्य ने १६७२-७३ में वाद भूमि एवं समीपवर्ती भूमि का सड़क के निर्माण के लिए उपयोग किया -अपीलार्थीगण ने वाद भूमि के स्वामी होने का दावा किया- कथित रूप से कोई भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू नहीं की गई थी और न ही अपीलार्थीगण या समीपवर्ती भूमि स्वामियों को मुआवजा दिया गया था- पड़ोसी भूमि के स्वामियों के संबंध में भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू की गई थी और दिनांक ०४.१०.२००५ को पंचाट पारित किया गया था- अपीलार्थीगण ने वर्ष २०११ में उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका दायर कर भूमि अधिग्रहण अधिनियम के अंतर्गत अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू करने या वाद भूमि के लिए मुआवजे की मांग की - उच्च न्यायालय ने माना कि इस मामले में परिसीमा के प्रारंभिक बिन्दू के निर्धारण के लिए विधि एवं तथ्य के विवादित प्रश्न शामिल हैं, जिन्हें रिट कार्यवाहियों में न्यायनिर्णित नहीं किया जा सकता- हस्तगत अपीलों में, जो प्रश्न उठाया गया था , वह यह था कि क्या राज्य, केवल विलंब और उपेक्षा के आधार पर, उन लोगों के प्रति अपने विधिक दायित्व से बच सकता है जिनसे निजी संपत्ति छीन ली गई थी- अभिनिर्धारित किया गयाः राज्य स्वयं की विलंब और उपेक्षा के आधार पर रक्षा नहीं कर सकता- न्याय करने की कोई " परिसीमा" नहीं हो सकती- राज्य ने गुप्त और मनमाने तरीके से विधि द्वारा अपेक्षित मुआवजे के वितरण को सीमित करने का सक्रिय रूप से प्रयास किया है- यह मनमानी कार्रवाई अपीलार्थीगण के अनुच्छेद ३१ के अधिकार का भी उल्लंघन थी - राज्य इस बात का कोई साक्ष्य प्रस्तुत करने में असमर्थ रहा कि अपीलार्थीगण की भूमि विधि द्वारा अनुमत प्रक्रिया से ली गई थी या उन्होंने कभी कोई मुआवजा दिया था- अपीलार्थीगण को विधि की उचित प्रक्रिया का पालन किए बिना अवैध रूप से बेदखल भी कर दिया गया था- स्वेच्छया से अपनी भूमि देने के लिए लिखित सहमति के अभाव में, अपीलार्थीगण को विधि अनुसार क्षतिपूर्ति का अधिकार था - संविधान के अनुच्छेद १३६ व १४२ के अंतर्गत असाधारण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुये राज्य को वाद भूमि को अधिग्रहित भूमि के रूप में मान्य किये जाने और अपीलार्थीगण को उन्हीं शर्तों पर उचित रूप से मुआवजा वितरित किये जाने, जैसी कि संदर्भित न्यायालय के आदेश दिनांकिंत ०४-१०-२००५ में आदेशित की गई थी, के लिये निर्देशित किया - राज्य को अपीलार्थीगण को ५०,००० रूपये विधिक परिव्यय एवं खर्चों के रूप में अदा किये जाने हेतु भी निर्देशित किया - भूमि अधिग्रहण- परिसीमा- विलंब एवं उपेक्षा।

अपील को स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित कियाः-

१. वर्तमान मामले के तथ्यों से दर्शित होता है कि राज्य ने गुप्त और मनमाने तरीके से सक्रिय रूप से, इसे केवल उन लोगों के लिए जिनके लिए उसे विशेष रूप से न्यायालय

द्वारा प्रोत्साहित किया गया था, न कि उन सभी के लिए जो हकदार हैं, सीमित करने का प्रयास किया है । यह मनमानी कार्यवाही जो अपीलार्थीगण के अनुच्छेद ३१ के अधिकार(वाद हेतुक के समय) का उल्लंघन है और जिसके लिए निःसंदेह उच्च न्यायालय के द्वारा अनुच्छेद २२६ के क्षेत्राधिकार के अंतर्गत विचार और हस्तक्षेप किये जाने की आवश्यकता है । [पैरा १६] [१०५१-सी-ई]

यू. पी. राज्य बनाम मनोहर, **(२००५) २ एस. सी. सी. १२६ - संदर्भित**।

२. राज्य ने केवल अपीलार्थीगण की कथित मौखिक सहमति या आपत्ति के अभाव का हवाला दिया है, लेकिन इस याचिका को प्रमाणित करने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है । इसके अतिरिक्त, राज्य ऐसा कोई साक्ष्य प्रस्तुत करने में असमर्थ रहा जो यह दर्शित करता हो कि अपीलार्थीगण की भूमि विधि द्वारा अनुमत तरीके से अधिग्रहित की गई थी या ले ली गई थी, या उन्होंने कभी कोई मुआवजा दिया था। वर्ष २००७ के साथ-साथ उच्च न्यायालय की अन्य रिट कार्यवाहियों में भी राज्य की स्थिति और उच्च न्यायालय के पश्चातवर्ती निष्कर्ष यही थे । [पैरा २१] [१०५२-एफ-एच]

३. राज्य का यह तर्क कि चूंकि उक्त संपत्ति अपीलार्थीगण की संपत्ति से समीपवर्ती नहीं है, इसलिए यह उन्हें समानता के आधार पर लाभ का दावा करने के अधिकार से वंचित करती है, स्वीकार योग्य नहीं है । इसके समीपवर्ती न होने के बावजूद (जिसे अपीलार्थीगण द्वारा दायर प्रत्युत्तर शपथपत्र में स्वीकार किया गया है), यह स्पष्ट है कि वाद भूमि का अधिग्रहण भी वर्ष १६७२-७३ में समान उद्देश्य- नारग फागला रोड़ के निर्माण के लिए किया गया था और संदर्भित न्यायालय के समक्ष दावाकर्ताओं की तरह, इन अपीलार्थीगण को भी अवैधानिक रूप से बिना विधि की सम्यक प्रक्रिया का अनुपालन किए बेकब्जा किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप अनुच्छेद ३१ का उल्लंघन हुआ और अनुच्छेद २२६ के क्षेत्राधिकार के अंतर्गत उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता हुई । स्वैच्छिक रूप से अपनी भूमि छोड़ने की लिखित सहमति के अभाव में, अपीलार्थीगण विधि अनुसार मुआवजे के अधिकारी थे । किसी व्यक्ति को उसकी निजी संपत्ति से विधि की सम्यक प्रक्रिया का अनुपालन किये बिना जबरन बेदखल करना, अनुच्छेद ३००-क के अंतर्गत उसके मानवाधिकार और संवैधानिक अधिकार दोनों का उल्लंघन था [पैरा २२ और २५] [१०५२-एच; १०५३-ए-सी; १०५४-डी

विद्या देवी बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य **(२०२०) २ एससीसी ५६६- पर विश्वास प्रकट किया।**

४. संविधान के अनुच्छेद १३६ व १४२ के अंतर्गत असाधारण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुये राज्य को वाद भूमि को अधिग्रहित भूमि के रूप में मान्य किये जाने और अपीलार्थीगण को उन्हीं शर्तों पर उचित रूप से मुआवजा वितरित किये जाने, जैसी कि संदर्भित न्यायालय के आदेश दिनांकित ०४-१०-२००५ में आदेशित की गई थी, के लिये निर्देशित किया । प्रत्यर्थी-राज्य को यह सुनिश्चित करने का निर्देश दिया गया कि उपयुक्त भूमि अधिग्रहण कलेक्टर मुआवजे की गणना करे और आज से चार माह के भीतर अपीलार्थीगण को वितरित करे । अपीलार्थीगण दिनांक १६.१०.२००१ (अर्थात अधिनियम की धारा ४ के अंतर्गत अधिसूचना जारी होने की दिनांक) से आक्षेपित निर्णय की दिनांक अर्थात १२.०६.२०१३ तक, विधि के अंतर्गत देय सभी राशियों पर ब्याज व क्षतिपूर्ति के पारिणामिक लाभ के भी अधिकारी होंगे । अपीलार्थीगण के

मौलिक अधिकारों की उपेक्षा को दृष्टिगत रखते हुये, जिसके कारण उन्हें इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाना पड़ा और बेदखली के कार्य के दशकों बाद उपचार प्राप्त करना पड़ा, प्रत्यर्थी - राज्य को अपीलार्थीगण को २५००० रूपये का विधिक परिव्यय और खर्चे का भुगतान करने का निर्देश दिया गया। [पैरा २६ और २७] [१०५४-ई-जी; १०५५-ए-बी]

बिशनदास बनाम पंजाब राज्य **[१६६२] २ एस. सी. आर. ६६**; *महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम बलवंत रेगुलर मोटर सर्विस* **[१६६६] १ एस. सी. आर. ८०८ - का अनुसरण किया गया**

हिन्दुस्तान पेट्रोलियम कार्पोरेशन लिमिटेड बनाम डेरियस शापुर चैन्नई **[२००५] एसयूपीपी (३)** एससीआर ३८८ ; एन. पद्मम्मा बनाम एस. रामकृष्ण रेड्डी **(२००८) १५ एससीसी ५१७;** दिल्ली एयरटेक सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य **[२०११] १२ एस. सी. आर. १६१**; जिलुभाई नानभाई कहचर बनाम गुजरात राज्य **[१६६४] एसयूपीपी १ एस. सी. आर. ८०७- पर निर्भरता व्यक्त की गई।** तुकाराम काना जोशी और अन्य बनाम महाराष्ट्र औद्योगिक विकास निगम (एमआईडीसी) [२०१२] १३ एससीआर; एयर इंडिया लिमिटेड बनाम विशाल कपूर **[२००५] एसयूपीपी ३ एससीआर ६७०**; महाराष्ट्र राज्य बनाम दिगंबर**[१६६५]एसयूपीपी १ एससीआर ४६२** ; मध्य प्रदेश राज्य और अन्त्र बनाम भाईलाल भाई एवं अन्य **[१६६४] ६ एस. सी. आर. २६१**; बृजेश कुमार और अन्य बनाम हरियाणा राज्य **[२०१४] ११ एस. सी. सी. ३५१**; वजीर चंद बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य **[१६५५] १ एस. सी. आर. ४०८** ;उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम धर्मेंद्र प्रसाद सिंह और अन्य **[१६८६] १ एस. सी. आर. १७६-संदर्भित।**

एंटिक बनाम कैरिंगटन [१७६५] ईडब्ल्यूएचसी (के. बी.) १६८-संदर्भित किया गया।

<u>संदर्भित न्याय दृष्टांत</u>

(२००५) २ एससीसी १२६	संदर्भित किया गया है	पैरा ६
[२०१२] १३ एससीआर	संदर्भित किया गया है	पैरा ६
[२००५] एसयूपीपी ३ एस. सी. आर. ६७०	संदर्भित किया गया है	पैरा ८
(२०२०) २ एस. सी. सी. ५६६	पर विश्वास प्रकट किया	पैरा ६
[१६६५] एसयूपीपी १ एस. सी. आर. ४६२	संदर्भित किया गया है	पैरा १०
[१६६४] ६ एससीआर २६१	संदर्भित किया गया है	पैरा १०
(२०१४) ११ एस. सी. सी. ३५१	संदर्भित किया गया है	पैरा १०
[१६५५] १ एससीआर ४०८	संदर्भित किया गया है	पैरा १४
[१६६२] २ एससीआर ६६	अनुसरित किया गया।	पैरा १५
[१६८६] १एससीआर १७६	संदर्भित किया गया है	पैरा १५
[१६६६] १ एससीआर ८०८	अनुसरित किया गया।	पैरा १८

[२००५] एसयूपीपी ३ एस. सी. आर. ३८८ पर विश्वास प्रकट किया पैरा २५

(२००८) १५ एस. सी. सी. ५१७ पर विश्वास प्रकट किया पैरा २५

[२०११] १२ एससीआर १६१ पर विश्वास प्रकट किया पैरा २५

[१९९४] एसयूपीपी १ एस. सी. आर.८०७ पर विश्वास प्रकट किया पैरा २५

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः सिविल अपील क्रमांक.२७७३/२०२२

सी. डब्ल्यू. पी. क्रमांक ७८७३/२०११ में हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय शिमला के द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश दिनांकित १२.०९.२०१३ से।

अपीलार्थीगण की ओर से अधिवक्ता शरण ठाकुर, महेश ठाकुर, सिद्धार्थ ठाकुर, सुश्री विपाशा सिंह, सुश्री विश्वेंद्र सिंह।

प्रत्यर्थीगण की ओर से अधिवक्ता अभिनव मुखर्जी, सुश्री बिहू शर्मा, सुश्री प्रतिष्ठा विज, अक्षय सी. श्रीवास्तव।

न्यायालय का निर्णय **न्यायमूर्ति एस. रवींद्र भट** द्वारा दिया गया।

१. विलंब को क्षमा किया गया एवं अनुमति दे दी गई। पक्षकारों के अधिवक्ताओं की सहमति से अपील पर अंतिम रूप से सुना गया। विधि अनुसार व्यवहार वाद संस्थित करने की स्वतंत्रता के साथ, उनकी रिट याचिका का निपटारा करने के हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय शिमला के अंतिम निर्णय[1] से व्यथित होकर अपीलार्थीगण द्वारा अपील प्रस्तुत की गई है।

तथ्यः-

२. सुख दत्त रात्रा और भगत राम (इसके बाद 'अपीलार्थीगण') मौजा सरोल बसाच, तहसील पच्छाद, जिला सिरमौर हिमाचल प्रदेश (एतसमिन पश्चात 'वाद भूमि') में स्थित भूमि[2] के स्वामी होने का दावा करते हैं। प्रत्यर्थी - राज्य ने १९७२-७३ में 'नारग फागला रोड़' के निर्माण के लिए वाद भूमि एवं उससे समीपवर्ती भूमि का उपयोग किया, लेकिन कथित तौर पर कोई भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू नहीं की गई, न ही अपीलार्थीगण या उससे लगी हुई भूमि के स्वामियों को मुआवजा दिया गया।

३. हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय (इसके बाद 'उच्च न्यायालय') के एक निर्णय[3] के अनुसार, राज्य को भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू करने का निर्देश देते हुये, भूमि अधिग्रहण अधिनियम, १८९४ (इसके बाद 'अधिनियम') की धारा ४ के अंतर्गत दिनांक १९.१०.२००१ को एक अधिसूचना जारी की गई थी

१.सीडब्लूपीक्रमांक७८७३/२०११दिनांकित१२-०९-२०१३

२- खसरा क्रमांक १४१, २३२/१४२, १४३, १४४, १४५, २८१/२९७, २०९/१४७, १५८, २९८/१४९, २८२/२९७, खसरा क्रमांक २०१/१३८, २४२/१४९, २०९/१५४, १५८, २११/१९३, १९/१७२ तथा खसरा क्रमांक ५०, ५१, ८९, २७८/९२, २८०/९३ एवं २०५/१४७,२८१/२९७,१५१,१५२,२८३/१५३,२८५/२०

३.देवेन्द्र सिंह एवं अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य सीडब्लूपी क्रमांक ८१९/१९९२।

(३०.१०.२००१ को प्रकाशित) एवं दिनांक २०.१२.२००१ को ३०,००० रूपये प्रति बीघा मुआवजा तय करते हुये पंचाट पारित किया गया था। दस पड़ौसी भूमि स्वामियों (माताराम एवं अन्य) द्वारा मुआवजे की वृद्धि के लिये, अधिनियम की धारा १८ के अंतर्गत, कार्यवाही शुरू की गई थी, जिनकी भूमि समान रूप से समान सड़क के निर्माण के लिए प्रयोग की गई थी एवं संदर्भित न्यायालय द्वारा उनके पक्ष में दिनांक ०४-१०-२००५ को पंचाट [४] पारित किया गया था। यह अभिनिर्धारित किया गया, कि संदर्भित मामले के याचिकाकर्ता ३६,००० प्रति बीघा का अतिरिक्त (बढ़ा हुआ) प्रतिकर, भूमि के बाजार मूल्य पर ३० प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से क्षतिपूर्ति तथा अधिनियम की धारा २३ (१-क) के अंतर्गत १२ प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से दिनांक १६-१०-२००१ (धारा ४ के अंतर्गत अधिसूचना के जारी होने की दिनांक) से कलेक्टर द्वारा पंचाट पारित करने की दिनांक अर्थात दिनांक २०.१२.२००१ तक अतिरिक्त प्रतिकर एवं धारा २८ के अंतर्गत दिनांक १६-१०-२००१ से एक वर्ष की समयावधि के लिए ६ प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से तथा इसके बाद संदाय किये जाने की दिनांक तक १५ प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से ब्याज पाने के अधिकारी थे। वर्ष २००६ में, उच्च न्यायालय ने उन दावाकर्ताओं के, जो (अधिग्रहण की कार्यवाही के प्रारंभ होने की दिनांक के बजाय) कब्जा प्रप्ति की दिनांक से सांविधिक ब्याज चाहते थे, आदेश के विरूद्ध अपील को निरस्त[५] कर दिया।

४. इसी प्रकार, स्थित भूमि स्वामियों के द्वारा , उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका दायर की गई, समीपवर्ती गांव से एक अनख सिंह द्वारा दायर की गई रिट याचिका, उच्च न्यायालय[६] द्वारा, रिट याचिकाकर्ताओं की भूमि को अधिनियम के अंतर्गत पारिणामिक लाभों के साथ अधिग्रहित किये जाने के निर्देश के साथ स्वीकार की गई, बाद में अन्य समान रूप से स्थित स्वामियों को भी इन निर्देशों का लाभ मिला[७]।

५. इसके कारण अपीलार्थीगण को उच्च न्यायालय के समक्ष, वर्ष २०११ में एक रिट याचिका, अधिनियम के अंतर्गत वाद भूमि के अधिग्रहण की कार्यवाही प्रारंभ करने या प्रतिकर की मांग के लिए, दायर करनी पड़ी। उच्च की पूर्ण पीठ के निर्णय[८] का अवलम्ब लेते हुये उक्त निर्णय में यह अभिनिर्धारित कियाा गया कि इस मामले में परिसीमा के प्रारंभिक बिन्दू के निर्धारण के लिए विधि एवं तथ्य के विवादित प्रश्न शामिल हैं, जिन्हें रिट कार्यवाहियों में न्यायनिर्णित नहीं किया जा सकता- विधि अनुसार व्यवहार वाद संस्थित करने की स्वतंत्रता के साथ रिट याचिका निराकृत कर दी गई थी। पीड़ित, अपीलार्थीगण ने इन अपीलों के माध्यम से इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है।

पक्षकारों के तर्क

६. अपीलार्थीगण की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री महेश ठाकुर ने तर्क प्रस्तुत किया की राज्य ने अपीलार्थीगण की भूमि को, अवैध रूप से विधि द्वारा समेकित प्रक्रिया का अनुसरण किये बिना, हड़प

५.आरएफएक्रमांक१-६/२००६दिनांकित२५-०८-२००६

६.सीडब्लूपीक्रमांक११६२/२००४दिनांकित२३-०४-२००४

७.सीडब्लूपीक्रमांक१३५६/२०१०दिनांकित२०-१२-२०१३

८.शंकरदास बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य सीडब्लूपी क्रमांक १६६६/२०१०-सी निर्णय दिनांकित ०२-०३-२०१३

लिया था तथा *उत्तर प्रदेश राज्य विरूद्ध मनोहर* [६] एवं *तुकाराम काना जोशी एवं अन्य विरूद्ध महाराष्ट्र औद्योगिक विकास निगम (एम. आई. डी. सी.)* [१०] में इस न्यायालय के निर्णयों पर निर्भरता व्यक्त की।

७. आगे यह व्यक्त किया गया है कि अपीलार्थीगण का मामला भी उन समीपवर्ती भूमि स्वामियों के समान है, जिन्हें दिनांक ०४-१०-२००५ तथा बाद की रिट कार्यवाहियों में, पंचाट द्वारा, भूमि अधिग्रहण का पारिणामिक लाभ और मुआवजा दिया गया था। अधिवक्ता ने तर्क किया कि राज्य की निष्क्रियता मनमानी है, यह देखते हुये कि वाद भूमि से लगी हुई भूमि को उच्च न्यायालय के निर्देशों के अधीन अधिग्रहित किया गया था, बावजूद इसके उसका प्रयोग उसी उद्देश्य के लिये किया जा रहा है।

८. अधिवक्ता ने इस बात पर प्रकाश डाला कि प्रत्यर्थी- राज्य ने इस बात पर विवाद नहीं किया है कि अपीलार्थीगण जिस वाद भूमि के स्वामी थे, उसे राज्य द्वारा नारग फागला सड़क के निर्माण के लिए लिया गया और उपयोग किया गया था , तथा कोई मुआवजा नहीं दिया गया था। इसलिए, यह देखते हुए कि ये तथ्य निर्विवादित हैं, यह तर्क किया गया कि *एयर इंडिया लिमिटेड बनाम विशाल कपूर*[११] के मामले में इस न्यायालय के निर्णय के आलोक में, उच्च न्यायालय ने रिट याचिका को निरस्त करने में चूक की थी।

९. अधिवक्ता ने न्यायालय का ध्यान विद्या देवी बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य [१२] में इस न्यायायल के एक निर्णय की ओर आकर्षित किया, जिसमें उन्होंने तर्क दिया गया कि समान तथ्य और मौजूदा परिस्थितियां थीः अपीलार्थीगण की तरह ही याचिकाकर्ताओं की भूमि राज्य द्वारा एक ही समय और एक ही उद्देश्य के लिये ली गई थी और इस न्यायालय ने १७५९ दिनों के विलंब को क्षमा करने के बाद, अपील की अनुमति दी और राज्य को सभी सांविधिक लाभों के साथ मुआवजे का भुगतान करने का निर्देश दिया, जिसमें क्षतिपूर्ति, ब्याज आदि शामिल थे।

१०. हिमाचल प्रदेश राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री अभिनव मुखर्जी ने आग्रह किया कि याचिका अत्यधिक विलंब और उपेक्षा से प्रभावित हुई है और केवल इसी आधार पर खारिज की जानी चाहिये। अपीलार्थीगण ने वर्ष १९७२-७३ में राज्य द्वारा की गई कार्यवाही के विरूद्ध वर्ष २०११ मे ३८ वर्षों के अत्यधिक विलंब के बाद उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया था तथा २०१३ में, आक्षेपित निर्णय पारित होने के बाद इस न्यायालय में आने में लगभग छः वर्ष का अत्याधिक विलंब हुआ। इस न्यायालय के निर्णय *महाराष्ट्र राज्य विरूद्ध दिगम्बर* [१३], *मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य विरूद्ध भाईलाल भाई एवं अन्य* [१४] *एवं ब्रजेश कुमार एवं अन्य विरूद्ध हरियाणा राज्य* [१५] पर निर्भरता व्यक्त की तथा अधिवक्ता ने, तुकाराम काना जोशी (उपरोक्त), जिस पर अपीलार्थीगण द्वारा दृणता से भरोसा प्रकट किया गया है, *दिगम्बर*

६.(२००५)२एससीसी१२६(एतस्मिनपश्चात"मनोहर")
१०. (२०१२)(१३) एससीआर २९ (एतस्मिन पश्चात "तुकाराम काना जोशी")
११.२००५एसयूपीपी(३)एससीआर६७०
१२. (२०२०) २ एससीसी ५६६; सिविल अपील क्रमांक ६०-६१/२०२०, निर्णय दिनांक ०८-०१-२०२० (एतस्मिन पश्चात "विद्यादेवी")
१३. १९६५ एसयूपीपी (१) एससीआर ४६२ (एतस्मिन पश्चात "दिगम्बर")
१४. १९६४ (६) एससीआर २६१
१५. (२०१४) ११ एससीसी ३५१

(उपरोक्त) मामले में बड़ी पीठ के फैसले के आलोक में गलत है जिस पर *तुकाराम काना जोशी* में विचार नहीं किया गया था। प्रत्यर्थी राज्य ने जबाव के माध्यम से, उसी आधार पर अपीलार्थीगण द्वारा विलंब की माफी के लिये दायर किये गये आवेदन का विरोध किया है।

११. तथ्यों के संबंध में, राज्य की ओर से अधिवक्ता द्वारा व्यक्त किया गया कि नारग फागला सड़क का निर्माण वास्तव में उन अपीलार्थीगण और अन्य भूमि स्वामियों, जो संयोजकता का लाभ लेना चाहते थे, के अनुरोध पर ही बनाई गई थी। अधिवक्ता ने दावा किया कि उन्होंने इस उद्देश्य के लिये अपनी भूमि स्वेच्छया दे दी थी, और इसलिए उनकी मौखिक सहमति से उक्त निर्माण किया गया। वर्ष १९७२-७३ जब उक्त सड़क का निर्माण हुआ, से वर्ष २०११ तक अपीलार्थीगण द्वारा कोई आपत्ति नहीं उठाई गई एवं मुआवजे की मांग नहीं की गई। इसके अतिरिक्त अधिवक्ता ने तर्क दिया कि अन्य रिट कार्यवाही (सी. डब्ल्यू. पी. क्रमांक ११९२/२००४ तथा १३५९/२०१०) में की भूमि अपीलार्थीगण की वाद भूमि से लगी हुई नहीं हैं, जैसा कि उनके द्वारा दावा किया गया है। यह भी व्यक्त किया कि अपीलार्थीगण की भूमि सिरमौर जिले में आती है जबकि अन्य रिट कार्यवाही में, की भूमि बारा-चोरू होते हुये जलारी से सुजानपुर के बीच सड़क के लिए अधिग्रहित की गई थी, जो कि एक अलग सड़क है, जो हमीरपुर जिले में आती है। इसलिए, इन तथ्यों पर, अधिवक्ता ने आग्रह किया कि समानता का आधार स्थिर रखे जाने योग्य नहीं है।

१२. अंत में, यह तर्क दिया गया कि परिसीमा, सड़क के निर्माण और सड़क के लिए मौखिक सहमति से संबंधित तथ्य के विवादित प्रश्नों के आलोक में, सिविल न्यायालय उपयुक्त मंच होगा और इस प्रकार आक्षेपित आदेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।।

विश्लेषण और निष्कर्ष

१३. जबकि संपत्ति का अधिकार अब मौलिक अधिकार नहीं है[१६], यह ध्यान में रखना उचित है कि वाद भूमि के बेदखली के समय, संपत्ति का अधिकार संविधान के भाग ३ में शामिल था। विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया से अन्यथा संपत्ति से वंचित करने का अधिकार, अनुच्छेद ३०० क के अंतर्गत एक संवैधानिक अधिकार बना हुआ है।

१४. विधि के शासन का यह सुस्थापित सिद्धान्त है कि विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया या विधि द्वारा अनुमत के सिवाए किसी भी व्यक्ति को स्वतंत्रता या संपत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता है। इसकी मान्यता १७०० के दशक में *एंटिक बनाम में राजा* [१७] की पीठ के निर्णय एवं *वजीर चंद बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य* [१८] *में, इस न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय से मिलती है।* इसके अतिरिक्त, विभिन्न निर्णयों में, इस न्यायालय ने बार-बार माना है कि उदारता की व्यापकता का आनंद लेने की बजाए, राज्य की अक्सर यह प्रदर्शित करने की अधिक जिम्मेदारी होती है कि उसने विधि की सीमा के भीतर कार्य किया है, और इसलिए, विधि के शासन के मूल सिद्धांत को धूमिल नहीं किया है।

१५. निजी संपत्ति के विषय की बात करें तो इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से बेदखल करने के लिए वैधता की उच्च सीमा को बनाये रखा जाना चाहिये,

---

१६.संविधान(चवलीसवाँसंशोधन)अधिनियम,१९७८

१७.[१७६५]ईडब्लूएचसी(केबी)१९८

१८.१९५५(१)एससीआर४०८

यह तब अधिक, जब राज्य द्वारा ऐसा किया जाता है। *बिशनदास बनाम पंजाब राज्य* [१६] *के मामले में इस न्यायालय ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि उक्त* मामले में याचिकाकर्ता अतिक्रामक थे और उन्हें एक कार्यकारी आदेश द्वारा हटाया जा सकता था, और इसके बजाए यह निष्कर्ष दिया कि राज्य और उसके अधिकारियों द्वारा की गई कार्यकारी कार्रवाई, विधि के शासन के आधारभूत सिद्धांत के लिए विनाशकारी थी। इस न्यायालय ने, एक अन्य मामले में-*उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम धर्मेन्द्र प्रसाद सिंह और अन्य* [२०] *के मामले में अभिनिर्धारित किया किः-*

" एक पट्टाकर्ता, जिसके पास सबसे अच्छा हक है, को पट्टे की समयावधि का पर्यवसान होने या उससे पहले समपहरण या अन्य प्रकार से पट्टे का पर्यवसान होने पर भी कब्जे को बल के प्रयोग द्वारा न्यायिकेत्तर तरके से पुर्नस्थापित करने का कोई अधिकार नहीं है। पट्टा विलेख में " पुनः प्रवेश " अभिव्यक्ति का प्रयोग भी कब्जे का पुर्नस्थापित करने के लिए न्यायिकेत्तर तरीकों के प्रयोग को अधिकृत नहीं करता। विधि में, पट्टाग्रहिता का कब्जा, पट्टे की समयावधि का पर्यवसान या उससे पहले पर्यवसान होने के बाद भी, विधिक कब्जा होता है और उसे बलपूर्वक बेदखल किया जाना वर्जित होता है। एक पट्टाग्रहिता, विधि की सम्यक प्रक्रिया से अन्यथा, बेकब्जा नहीं किया जा सकता। हस्तगत मामले में, तथ्य यह है कि पट्टाकर्ता राज्य है इसलिये इसे किसी भी उच्च या बेहतर स्थिति में नहीं रखा जा सकता, बल्कि यह आवश्यकता से उत्पन्न एक अतिरिक्त निषेध के अंतर्गत आता है कि सरकार और सरकारी प्राधिकारियों के सभी कार्यों का एक विधिक वंशानुक्रम होना चाहिये।

१६. किसी व्यक्ति के साथ-साथ उसकी निजी संपत्ति को एक महत्वपूर्ण सुरक्षा (जो पहले अनुच्छेद ३१ में सन्निहित थी और अब अनुच्छेद ३००-क में एक संवैधानिक अधिकार के रूप में है) प्रदान की गई है और भूमि अधिग्रहण करते समय, राज्य को उस उच्च सीमा को पूरा करना चाहिए। अब प्रश्न यह है कि क्या राज्य, केवल देरी और बाधाओं के आधार पर, उन लोगों के प्रति अपने विधिक दायित्व से बच सकता है, जिनकी निजी संपत्ति जप्त की गई है ? इन तथ्यों और परिस्थितियों में, हम पाते हैं कि यह निष्कर्ष अस्वीकार्य है, और समानता और निष्पक्षता के आधार पर हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

१७. जब समग्र रूप से देखा जाए, तो यह स्पष्ट है कि राज्य के कार्यों, या उनकी कमी ने वास्तव में अपीलार्थीगण के साथ हुये अन्याय को और बढ़ा दिया है और उन्हें देर से ही सही, इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के लिए मजबूर किया है। वर्ष १९९० के दशक के प्रारंभ में अधिग्रहण की कार्यवाही की शुरुआत उच्च न्यायालय के आदेश पर ही हुई थी। इस तरह के न्यायिक हस्तक्षेप के बाद भी, राज्य ने न्यायालय के निर्देशों का लाभ केवल उन्हीं लोगों को देना जारी रखा, जिन्होंने विशेष रूप से न्यायालयों से संपर्क किया। राज्य के लापरवाहीपूर्ण आचरण को चुनिंदा तरीके से, केवल उन रिट याचिकाकर्ताओं की भूमि के संबंध में, जिन्होंने दिनांक २३.०४.२००७ (सी. डब्ल्यू. पी. क्रमांक ११९२/२००४) तथा दिनांक २०.१२.२०१३ (सी. डब्ल्यू. पी. क्रमांक १३५९/२०१०) के आदेशों के अनुसार, पिछली कार्यवाहियों में न्यायालय का दरवाजा खटखटाया था न कि अन्य भूमि स्वामियों के संबंध में, अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू करने की इस कार्यवाही से देखा जा सकता है, इस प्रकार, हर स्तर पर, राज्य ने विधि द्वारा विहित तरीके से सार्वजनिक उपयोग के लिये आवश्यक भूमि अधिग्रहित करने की अपनी जिम्मेदारी से बचने की कोशिश की।

१६.१९९२(२)एससीआर९९
२०.१९८९(१)एससीआर १७९

१८. जैसा कि वर्तमान विवाद में दोनों पक्षों द्वारा तर्क दिया गया है, विलंब और बाधाओं पर कई उदाहरण हैं जो दोनों तरफ हैं - हालाँकि, विशिष्ट तथ्यात्मक ढांचा इस न्यायालय को अपीलार्थीगण-भूमि स्वामियों के पक्ष में विचार करने के लिए मजबूर करता है। ऐसी स्थिति में राज्य स्वयं की विलंब और बाधाओं के आधार पर रक्षा नहीं कर सकता। न्याय करने की कोई परिसीमा नहीं हो सकती । इस न्यायालय ने बहुत पहले *महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम बलवंत रेगुलर मोटर सर्विस* [२१], के मामले में अभिनिर्धारित किया किः-

" अब साम्या के न्यायालयों में लैचेस का सिद्धांत कोई मनमाना या तकनीकी सिद्धान्त नहीं है । यहां कोई उपचार देना व्यावहारिक रूप से अन्यायपूर्ण होगा, या तो इसलिए कि पक्षकार ने ऐसा आचरण किया है कि जिससे यह माना जा सकता है कि उसने उपचार को त्याग दिया है या पक्षकार ने ऐसा आचरण और उपेक्षा की है कि उससे यद्यपि यह नहीं माना जा सकता कि उसने उपचार का अधिकार त्याग दिया है, परन्तु उसने दूसरे पक्ष को ऐसी स्थिति में डाल दिया है जिसमें बाद में उपचार दिये जाने पर उसे रखना उचित नहीं होगा, इनमें से किसी भी मामले में, समय की चूंक और विलंब अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

लेकिन प्रत्येक मामले में, यदि उपचार के विरूद्ध तर्क, जो अन्यथा न्यायसंगत होगा, केवल विलंब पर आधारित है, तो वह विलंब निश्चित रूप से परिसीमा की किसी भी विधि द्वारा वर्जित नहीं माना जा सकता। उस बचाव की वैधता को काफी हद तक साम्या के न्यायसंगत सिद्धान्तों पर अजमाया जाना चाहिये । जहां तक उपचार का संबंध है, ऐसे मामलों में दो परिस्थितियां, विलंब की अवधि और अंतराल के दौरान किये गये कार्यों की प्रकृति, हमेशा महत्वपूर्ण होती हैं, जिनमें से किसी भी एक या दूसरे को अपनाना किसी भी पक्ष को प्रभावित कर सकता है और न्याय या अन्याय कारित कर सकता है ।"

१६. वर्तमान मामले के तथ्यों से दर्शित होता है कि राज्य ने गुप्त और मनमाने तरीके से विधि द्वारा अपेक्षित मुआवजे के वितरण को उन सभी के जो कि हकदार हैं, के बजाए केवल उन लोगों , जिनके लिये न्यायालय द्वारा विशेष रूप से प्रोत्साहित किया गया था, तक सीमित करने की कोशिश की है। यह मनमानी कार्यवाही जो अपीलार्थीगण के अनुच्छेद ३१ के अधिकार(वाद हेतुक के समय) का उल्लंघन है और जिसके लिए निःसंदेह उच्च न्यायालय के द्वारा अनुच्छेद २२६ के क्षेत्राधिकार के अंतर्गत विचार और हस्तक्षेप किये जाने की आवश्यकता है, इस न्यायालय ने एक ऐसे ही मामले मनोहर (उपरोक्त) में- जिसमें पीड़ित पक्ष का नाम राजस्व अभिलेख से मिटा दिये जाने के कारण उसे भूमि से, बिना मुआवजे के भुगतान के, बेदखल कर दिया गया था, अभिनिर्धारित कियाः-

" अनुच्छेद ३०० - क. विधि के प्राधिकार के बिना व्यक्तियों को संपत्ति से वंचित न किया जाना- किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से विधि के प्राधिकार से ही वंचित किया जायेगा, अन्यथा नहीं । "

" यह एक ऐसा मामला है जहां हम अपीलार्थीगण- जो कि राज्य का प्राधिकारी हैं, के द्वारा प्रत्यर्थीगण को संपत्ति से वंचित करने के विधिक प्राधिकार का पूर्णतः अभाव पाते हैं । न्यायालय के मत में यह मामला संविधान के अनुच्छेद २२६ के अंतर्गत उच्च न्यायालय के रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के लिए बिल्कुल उपयुक्त था ... "

२१.१९६६(१)एससीआर ८०८

२०. पुनः *तुकाराम काना जोशी* (*उपरोक्त*) के मामले में, समान तथ्य व परिस्थितियों से निपटने के दौरान, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया किः-

" यहां ऐसे प्राधिकरण हैं, जो यह कहते हैं कि विलंब और लापरवाही दावा करने के अधिकार को समाप्त कर देते हैं वहीं इनमें से अधिकांश प्राधिकरण, दशकों पहले हुये नुकसान के लिए मुआवजा देना, वैधानिक बकाया की वसूली, शैक्षिक सुविधाओं के लिए दावा और समान मामलों की अन्य श्रेणियां आदि के संबंध में, न्यायशास्त्र के सिद्धान्त का पालन करते रहे हैं। यद्यपि यह सत्य है कि यहां ऐसे कुछ प्राधिकरण हैं, जिन्होंने संविधान के अनुच्छेद ३२ या २२६ के अंतर्गत यह अभिनिर्धारित किया कि विलंब और लापरवाही किसी नागरिक को उपचार मांगने से वर्जित करते हैं, भले ही उसके मौलिक अधिकार का उल्लघंन हुआ हो। यह मामला पूरी तरह से एक अलग परिदृश्य से संबंधित है। राज्य के पदाधिकारियों ने विधि की अनुमित के बिना अपीलार्थीगण की भूमि पर कब्जा कर लिया। अपीलार्थीगण ने बार बार मुआवजे का लाभ देने के लिये कहा था। राज्य को या तो अधिग्रहण के लिए निर्धारित प्रक्रिया का पालन करना चाहिये था या मांग या किसी अन्य अनुमत वैधानिक तरीके का अनुपालन करना चाहिये था। "

२१. दायर याचिकाओं पर विचार करने के बाद, इस न्यायालय ने पाया कि राज्य द्वारा उठाये गये तर्क विश्वास को प्रेरित नहीं करते हैं और अस्वीकार किये जाने योग्य हैं। राज्य ने केवल अपीलार्थीगण की कथित मौखिक सहमति या आपत्ति के अभाव का हवाला दिया है, लेकिन इस याचिका को प्रमाणित करने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है। इसके अतिरिक्त, राज्य ऐसा कोई साक्ष्य प्रस्तुत करने में असमर्थ रहा जो यह दर्शित करता हो कि अपीलार्थीगण की भूमि विधि द्वारा अनुमत तरीके से अधिग्रहित की गई थी, या उन्होंने कभी कोई मुआवजा दिया था। यह ध्यान रखना उचित है कि वर्ष २००७ में अन्य रिट कार्यवाहियों में भी राज्य की स्थिति और उच्च न्यायालय के पश्चातवर्ती निष्कर्ष यही थे ।

२२. यह न्यायालय राज्य के इस तर्क से भी प्रभावित नहीं है कि चूंकि उक्त संपत्ति अपीलार्थीगण की संपत्ति से समीपवर्ती नहीं है, इसलिए यह उन्हें समानता के आधार पर लाभ का दावा करने के अधिकार से वंचित करती है। इसके समीपवर्ती न होने के बावजूद (जिसे अपीलार्थीगण द्वारा दायर प्रत्युत्तर शपथपत्र में स्वीकार किया गया है), यह स्पष्ट है कि वाद भूमि का अधिग्रहण भी वर्ष १९७२-७३ में समान उद्देश्य- नारग फागला रोड़ के निर्माण के लिए किया गया था और संदर्भित न्यायालय के समक्ष दावाकर्ताओं की तरह, इन अपीलार्थीगण को भी अवैधानिक रूप से बिना विधि की सम्यक प्रक्रिया का अनुपालन किए बेकब्जा किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप अनुच्छेद ३१ का उल्लंघन हुआ और अनुच्छेद २२६ के क्षेत्राधिकार के अंतर्गत उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता हुई। स्वैच्छिक रूप से अपनी भूमि छोड़ने की लिखित सहमति के अभाव में, अपीलार्थीगण विधि अनुसार मुआवजे के अधिकारी थे। भूमि अधिग्रहण कार्यवाही के मामलों में लिखित सहमति की आवश्यकता, वास्तव में, *शंकर दास* (*उपरोक्त*) में उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णय द्वारा लेख की गई है जिसपर आक्षेपित निर्णय में विश्वास प्रकट किया गया है।

२३. इस न्यायालय ने विद्या देवी (उपरोक्त) मामले में लगभग समान तथ्यों और परिस्थितियों का सामना करते हुए 'मौखिक' सहमति के तर्क को आधारहीन मानते हुए अस्वीकार कर दिया और राज्य के दायित्व को रेखांकित कियाः

" १२.६ . विधि के शासन द्वारा शासित एक लोकतांत्रिक राजनीति में, राज्य विधि की अनुमति के बिना किसी नागरिक को उसकी संपत्ति से वंचित नहीं कर सकता था। इस न्यायालय के निर्णय पर तुकाराम काना जोशी बनाम एम. आई. डी. सी. [तुकाराम काना जोशी बनाम एम. आई. डी. सी. (२०१३) १ एस. सी. सी. ३५३: (२०१३) १ एस. सी. सी. (सी. आई. वी.) ४६१] के निर्णय में विश्वास प्रकट किया गया, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि राज्य को या तो अधिग्रहण के लिए निर्धारित प्रक्रिया का पालन करना चाहिये या मांग या किसी अन्य अनुमत वैधानिक तरीके का अनुपालन करना चाहिये। राज्य एक कल्याणकारी राज्य है जो विधि के शासन से शासित होता है एवं जो स्वयं को संविधान द्वारा प्रदान की गई स्थिति से परे कोई दर्जा नहीं दे सकता है।

१२.१०. इस न्यायालय ने हरियाणा राज्य बनाम मुकेश कुमार [हरियाणा राज्य बनाम मुकेश कुमार, (२०११) १० एससीसी ४०४: (२०१२) ३ एस. सी. सी. (सी. आई. वी.) ७६६] में माना कि संपत्ति का अधिकार अब न केवल संवैधानिक या सांविधिक अधिकार माना जाता है बल्कि एक मानव अधिकार भी माना जाता है।

मानवाधिकारों को व्यक्तिगत अधिकारों जैसे आश्रय का अधिकार, आजीविका, स्वास्थ्य, रोजगार आदि के अधिकार के अंतर्गत माना जाता है। मानवाधिकारों ने एक बहुआयामी विस्तार प्राप्त कर लिया है "।

२४. विलंब और उपेक्षा के संबंध में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया किः- " २.१२ . न्यायालय में अपील करने में राज्य के विलंब और उपेक्षा के बारे में अपीलार्थीगण द्वारा दिया गया तर्क भी अस्वीकार किये जाने योग्य है। वाद हेतुक की निरंतरता के मामले में या यदि परिस्थितियां न्यायालय के न्यायिक अंतर्विवेक को झकझोर देती है, तब विलंब और उपेक्षा को उठाया नहीं जा सकता। विलंब को माफ किया जाना न्यायिक विवेक का मामला है, जिसका प्रयोग किसी मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में विवेकपूर्ण और उचित तरीके से किया जाना चाहिये। यह मौलिक अधिकारों के उल्लंघन और दावा किए गए उपचार और विलंब कब और कैसे हुआ, इस पर निर्भर करेगा। सारभूत न्याय करने के लिए न्यायालयों के द्वारा उनके संवैाधानिक क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के लिए कोई परिसीमा अवधि विहित नहीं है।

१२.१३ ऐसे मामले में जहां न्याय की मांग संवैधानिक न्यायालय को, न्याय के लिए प्रोत्साहित करती है, न कि उसे पराजित करने के लिए, उसका क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के लिए बाध्य करती है। [पी. एस. सदाशिवस्वामी बनाम टी. एन. राज्य (१६७५) १ एस. सी. सी. १५२: १६७५ एस. सी. सी. (एल. एंड एस.) २२] "

२५. यह निष्कर्ष निकालते हुए कि किसी व्यक्ति को उसकी निजी संपत्ति से विधि की सम्यक प्रक्रिया का अनुपालन किये बिना जबरन बेदखल करना, अनुच्छेद ३००-क के अंतर्गत उसके मानवाधिकार और संवैधानिक अधिकार दोनों का उल्लंघन था[२२], इस न्यायालय ने अपील को स्वीकार

२२. हिन्दुस्तान पेट्रोलियम कार्पोरेशन लिमिटेड बनाम डेरियस शापुर चैन्नई **[२००५] एसयूपीपी (३)** एससीआर ३८८ ; एन. पद्मम्मा बनाम एस. रामकृष्ण रेड्डी **(२००८) १५ एससीसी ५१७;** दिल्ली एयरटेक सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य **[२०११] १२ एस. सी. आर. १६१**; जिलुभाई नानभाई कहचर बनाम गुजरात राज्य **[१६६४] एसयूपीपी १ एस. सी. आर. ८०७- पर निर्भरता व्यक्त की गई।**

कर लिया। हमने पाया कि विद्या देवी (उपरोक्त) में इस न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण हस्तगत मामले में हमारे समक्ष मौजूद लगभग समान तथ्यों पर पूरी तरह से लागू होता है।

२६. उपरोक्त विश्लेषण को ध्यान में रखते हुए, संविधान के अनुच्छेद १३६ और १४२ के अंतर्गत इस न्यायालय के असाधारण क्षेत्राधिकार को देखते हुए, राज्य को निर्देशित किया जाता है कि वह वाद भूमि को अधिग्रहित भूमि के रूप में मान्य करे तथा अपीलार्थीगण को उन्हीं शर्तों पर उचित रूप से मुआवजा वितरित करे, जैसी कि संदर्भित न्यायालय के भूमि संदर्भ याचिका क्रमांक १०-एल. ए. सी./२००४ (और समेकित मामले) में आदेश दिनांकिंत ०४-१०-२००५ में आदेशित की गई थी। प्रत्यर्थी राज्य को यह सुनिश्चित करने के लिए निर्देशित किया जाता है कि उपयुक्त भूमि अधिग्रहण कलेक्टर मुआवजे की गणना करे और आज से चार माह के भीतर अपीलार्थीगण को वितरित करे। अपीलार्थीगण दिनांक १६.१०.२००१ (अथार्त अधिनियम की धारा ४ के अंतर्गत अधिसूचना जारी होने की दिनांक) से अक्षेपित निर्णय की दिनांक अर्थात १२.०६.२०१३ तक, विधि के अंतर्गत देय सभी राशियों पर ब्याज व क्षतिपूर्ति के पारिणामिक लाभ के भी अधिकारी होंगे।

२७. उपरोक्त वर्णित कारणों से, अपील स्वीकार की जाती है और उच्च न्यायालय का अक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। अपीलार्थीगण के मौलिक अधिकारों की उपेक्षा को दृष्टिगत रखते हुये, जिसके कारण उन्हें इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाना पड़ा और बेदखली के कार्य के दशकों बाद उपचार प्राप्त करना पड़ा, हम प्रत्यर्थी - राज्य को अपीलार्थीगण को २५००० रूपये का विधिक परिव्यय और खर्चे का भुगतान करने का निर्देश देना भी उचित समझते हैं। लंबित आवेदन, यदि कोई हो, एततद्वारा निराकृत किये जाते हैं।

अनुवादित किया गया द्वाराः

दीक्षा अग्रवाल
अष्टम व्यवहार न्यायाधीश कनिष्ठ खण्ड/ न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी,
सागर मध्यप्रदेश,